The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 4 | Issue 1 | January 2026
ISSN: 2583-973X (Online), SJIF IF: 5.6
Website: www.theacademic.in

हिंदी सूफी काव्य में प्रेम का स्वरूप

डॉ० निज़ाम उद्दीन ख़ान

असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग, गांधी फ़ैज़ -ए-आम कालेज, शाहजहांपुर उत्तर प्रदेश

DOI : https://doi.org/10.5281/zenodo.18713942

प्रस्तावना: सूफी-साधना और सूफी-काव्य में प्रेम का महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रेम सूफियों का साधन भी है और साध्य भी। सूफी साधक दरअसल प्रेमी-साधक हैं। उनका मार्ग प्रेम का मार्ग है। सूफियों की मान्यता है कि परमात्मा ने सृष्टि की रचना प्रेम के कारण की है। इसलिए सृष्टि का मूल तत्व प्रेम ही है। परमात्मा और जीवात्मा का सम्बंध प्रेम का संबंध है। प्रेम के वशीभूत होकर ही ईश्वर ने सृष्टि की रचना की-

'पेम लागि संसार उपावा। पेम गहा विधि परगट आवा।'(1)

प्रेम के स्वरूप का दिग्दर्शन सूफ़ी कवि जायसी ने स्थान - स्थान पर किया है। कहीं तो यह स्वरूप लौकिक ही दिखाई पड़ता है और कहीं लोकबंधन से परे। प्रेम की प्राप्ति से दृष्टि आनंदमयी और निर्मल हो जाती है। जो बातें पहले नहीं सूझती थीं वे सूझने लगती हैं, चारों ओर सौंदर्य का विकास दिखाई पड़ने लगता है। पद्मावती की प्रशंसा सुनते ही जो प्रेम रत्नसेन के हृदय में संचरित होता है उसके प्रभाव का वर्णन वह इस प्रकार करता है—

"सहसौ करा रूप मन भूला। जहँ जहँ दीठ कँवल जनु फूला॥

तीनि लोक चौदह खँड, सबै पर मोहिं सूझि।प्रेम छाँड़ि नहीं लीन किछु, जौ देखा मन बूझि॥"(2)

प्रेम की कुछ विशेषताओं का वर्णन जायसी ने हीरामन तोते के मुँह से भी कराया है। सच्चा प्रेम एक बार उत्पन्न होकर फिर जा नहीं सकता। पहले उत्पन्न होते और बढ़ते समय तो उसमें सुख ही सुख दिखाई पड़ता है; पर बढ़ चुकने पर भारी दुःख का सामना करना पड़ता है। प्रेम बढ़ जाने पर और किसी भाव के लिये स्वतंत्र स्थान नहीं छोड़ता। जो और भाव उत्पन्न भी होते हैं वे सब उसके अधीन और वशवर्ती होते हैं—

"प्रीति बेलि जिनि अरुझै कोई। अरुझे मुए न छूटै सोई॥प्रीति बेलि ऐसे तन डाढ़ा। पलुहत सुख, बाढ़त दुख बाढ़ा॥प्रीति अकेलि बेलि चढ़ि छावा। दूसर बेलि न सँचरै पावा॥"(3)

सूफी साधक परमात्मा के प्रेम को पाने के लिए व्याकुल रहते हैं। उनके प्रेम की साधना परमात्म के प्रेम को प्राप्त करने की साधना है। परन्तु उस परमात्मा को प्राप्त कैसे करे? उसके स्वरूप को कैसे समझे? उसका दीदार कैसे हो? यह महत्वपूर्ण प्रश्न हैं। इस संसार में आकर प्राणी तो उसे भूल ही गया। उसके हृदय पर तो वासना का आधिपत्य है जो आत्मा और परमात्मा के बीच दीवार है। इन सारे सवालों का जवाब तो गुरु या पीर ही दे सकते हैं; वही उस परम रूह का साक्षात्कार करवा सकते हैं; वही नफ़्स से मुक्ति का राह बता सकते हैं; साधना-पथ पर आनेवाली बाधाओं से बचा सकते हैं, बिना गुरु या पीर के तो उस परमात्मा का दर्शन ही दुर्भल है। जायसी कहते हैं कि गुरु सुग्गे ने ही प्रेम का पंथ दिखा दिया वरना बिना गुरु के इस जगत में निर्गुण को कौन पा सकता है।

''गुरु सुआ जेहि पंथ दिखावा। बिन गुरु जगत को निर्गुण पावा।"(**4**)

सूफियों की साधना वैयक्तिक, एकांतिक और रहस्यवादी साधना है। प्रेमी साधकों का परमात्मा से मिलन इन्द्रियों की सहायता से नहीं होता बल्कि यह तो इन्द्रियों के परे जाकर होता है। साधकों को अपनी इन्द्रियानुभूति को अतिक्रमित करना होता है। इसलिए सूफियों की एकांतिक और रहस्यवादी साधना में गुरु का महत्त्व और बढ़ जाता है। अबु यजीद विस्तामी तो यहाँ तक कहते हैं कि ''जो साधक अपना गुरु नहीं बनाता उसका इमाम (गुरु) शैतान होता है।"(**5**) इसलिए सूफी-प्रेम साधना में गुरु का महत्वपूर्ण स्थान है। पीर (गुरु) के प्रशिक्षण और निर्देशन में ही प्रेमी-साधक को परमात्म-प्रेम को प्राप्त करना पड़ता है। यह प्रेम का पंथ कठिन है, इब्लीस (शैतान) रास्ते में उसे भटका सकता है, प्रलोभन दे सकता है और साधक साधना-पथ से भटक जाए, यह काम भारतीय दर्शन में माया करती है। पीर (गुरु) मुरशिद (शिष्य) में 'इश्क' की चिंगारी डाल देते हैं और शिष्य 'नित्य विरह' में जलने लगता है। 'कठिन पेम चिनगी विधि मेला।'हमने पूर्व में ही स्पष्ट किया कि जीव का जन्म ही परमात्म-प्रेम से बिछड़ना है लेकिन गुरु-कृपा से साधक को जैसे ही उस प्रेम का एहसास या दर्शन होता है वह 'नित्य विरह' में जलने लगता है। प्रियतम से भेंट तो साधनावस्था में हुई थी; मिलन तो क्षणिक था; साधनावस्था में परमात्मा की छवि जो 'बिजली की कौंध' के समान चमककर गायब हो गई। मुल्ला दाउद चंदायन में कहते है "कि जब चंदा सोहलों शृंगार से पूर्ण सुसज्जित होकर हवेली पर आती है तो उसके रूप सौंदर्य से 'दिव्य प्रकाश' की सृष्टि होती है नायक लेरिक को मुर्छा आ जाती है और वह मरण-दशा तक पहुँच जाता है-

सोरह करां सम्पूरन चांद ज्योति परगास।

बिजु चमक परि चमकी ओहि धरोहरि पास।"(**6**)

कुछ ऐसा ही रूप-सौंदर्य का वर्णन हीरामन तोता द्वारा पद्मावती का किया गया जिससे सुनकर रतनसेन को मुच्र्छा आ गई। 'सुन तहिं राजा गा मरुछाई।'सूफियों का प्रेम सामान्य मनुष्य का प्रेम नहीं है यह तो साधकों का दिव्य-प्रेम है। गुरु कृपा से पहली बार मिलन तो हो गया लेकिन वह मिलन स्थाई न हो सका; वह तो बेसुध होकर मुर्छित हो

गया था। वजह कि उसने अपनी समस्त वासनाओं का नाश नहीं किया था। हृदय को साफ किए बगैर, आत्मशुद्धि के बगैर परमात्मा का दर्शन कहाँ ! मैले हृदय में प्रियतम का वास कैसे हो सकता है। इसीलिए जायसी कहते हैं "कि पिउ (परमात्मा) तो हृदय में ही है पर भेंट नहीं होती, किसको

पुकारूँ, किसको रो-रोकर कहूँ कि मिलन करा दे।

'पिउ हिरदय मंह भेंट न होई। केहि रे पुकारौं कहौं केहि रोई।''(7)

सूफी-काव्य की यह स्पष्ट बात है कि परमात्मा के सौंदर्य को स्त्री-सौंदर्य के रूप में कल्पित किया गया है। सूफियों की मान्यता है कि इश्के मजाज़ी (सांसारिक प्रेम) इश्के हक़ीक़ी (परमात्म-प्रेम) का बाधक नहीं, साधक है। सांसारिक प्रेम को परमात्म-प्रेम प्राप्त करने का पुल बताते हुए जामी कहते हैं कि 'धरती के प्यार को घने रूप से पान करो ताकि तुम्हारे होठ पवित्र प्रेम-सूरा का पान कर सके। निर्गुण संतों की तरह सूफियों का सांसारिक-प्रेम निन्दनीय, त्याज्य और विरति का नहीं है। सूफियों के हाथों सांसारिक-प्रेम पड़कर परमात्म-प्रेम में रूपांतरित हो जाता है। इसलिए सूफी काव्य में स्त्री-पात्र यथा- पद्मावती, मधुमालती, चंदा, मृगावती, चित्रावली आदि के रूप-सौंदर्य को परमात्मा के रूप-सौंदर्य सदृश बताया गया। प्रेम और सौंदर्य के सम्बंध को स्पष्ट करते हुए जामी कहते हैं कि ''सौंदर्य वही है जो प्रेम को उत्पन्न करता है। इसलिए आत्मा सांसारिक सौंदर्य के सहारे परमप्रिय की ओर दृष्टि लगाए रहती है जहाँ सौंदर्य है वहीं प्रेम है। सौंदर्य जितना घना होगा प्रेम भी उतना ही घना होगा। सौंदर्य की पूर्णता ईश्वर में है इसलिए वास्तविक प्रेम-पात्र वही है।''**(8)** उपरोक्त उद्धहरण से स्पष्ट है कि सांसारिक-प्रेम और रूप-सौंदर्य का ही रूपांतरण वासनामुक्त होने पर परमात्म-प्रेम के रूप में होता है। चंदायन में चंदा जब खीरोदक साड़ी पहन, सोलहों कला शृंगार से सुसज्जित होकर महल के उपर आती है तो उसके रूप-सौंदर्य से अलौकिक एवं दिव्य-प्रकाश की सृष्टि होती है। सूफी-काव्य में स्त्री रूप-सौंदर्य को परमात्मा के रूप-सौंदर्य सदृश बताया गया; स्त्री-प्रेम को परमात्म-प्रेम की कुंजी बताया गया।सूफी प्रेम-काव्य में 'विरह' काव्य की अमूल्य निधि है। सूफी कवियों का मन विरह वर्णन में अधिक रमा है। मनुष्य का जन्म लेना ही परमात्मा के अखंड प्रेम से बिछुड़ना है। पीर की सहायता से साधक ज्योंही इस बात को जान लेता है 'नित्य विरह' में जलने लगता है। साधना के दौरान प्रियतमा का दर्शन तो क्षणिक ही होता है। मिलने की इच्छा, परमात्मा संग स्थाई मिलन की चाहत तीव्र से तीव्रतर होती जाती है। फलतः विरह सूफियों में भावोन्माद का रूप धारण कर लेता है।

सूफियों का प्रेम प्रियतमा के प्रेम प्राप्ति के लिए एक आशिक का प्रेम है। भारतीय प्रेमाख्यानक काव्य में विरह दाम्पत्य-जीवन के अंतर्गत नायक का नायिका के किसी बात पर रूठकर या कमाने के लिए या शापवश परदेश गमन के उपरांत होता है परन्तु सूफी-काव्य में आशिक और माशूक के बीच विरह का कारण नायिका के परिवारवाले होते हैं। यही कारण है कि सूफी-काव्य का विरह वर्णन ज्यादा उन्मत, भीषण और उग्र होता है। सूफियों के विरह में

प्रियतमा के प्रेम को पाने की विकलता पाई जाती है। अल गज़ाली कहते हैं "सचमुच प्रेम की मदिरा अपार गुणकारी है। उससे शरीर और प्राणों को शक्ति प्राप्त होती है। उसके पीने से रहस्य का उद्घाटन होता है। अतः मैं उस मदिरा का एक घूंट पीना चाहता हूँ। पीने के बाद मुझे मृत्यु और जीवन की चिन्ताएँ न सतायेंगी।"(9)

सूफी-साधना में हृदय को नफ़्स (वासना) से आवृत माना गया है। प्रेमी-साधकों को इस नफ़्स को मारे बगैर परम रूह (परमात्मा) का साक्षात्कार नहीं हो सकता। हृदय दर्पण की भाँति जब स्वच्छ हो जाता है तो उसमें परमात्मा की छवि दिखाई पड़ने लगती है। परमात्मा की हृदय पर पड़ने वाला इस छवि से मिलने के लिए रूह तड़पने लगता है। कुरान के अनुसार कुम्हार के समान अल्लाह ने जब खनखनाती हुई वलयाकार मिट्टी से इंसान को बनाया तो उसमें अपनी रूह फूंक डाली। मनुष्य के पास अल्लाह की दी हुई निशानी रूह ही है। इंसानी रूह ही साधना के दौरान परम रूह से एकमेक होकर बक़ा (स्थाई मिलन) हो जाना चाहती है, लेकिन साधको के आड़े आता है- नफ़्स (वासना)। मनुष्य की अहंकार, लोभ आदि प्रवृतियाँ हमेशा कल्ब (हृदय) को मैला करती रहती है। जायसी कहते है कि प्रेम पथ पर जिसने अपने अहंकार का नाश नहीं किया उसका पृथ्वी पर आना ही व्यर्थ है-

’जो नहीं सीस प्रेम पथ लावा। सो पृथमी मंह काहेक आवा।‘

प्रेम तो परस्पर अनुरक्ति से ही प्राप्य है, यह बल से प्राप्त तो नहीं ही हो सकता है-

’रस के बात बर सेउं न होई। रस जो आहिं रस रेउं भलेहि।‘

जो जल-जलकर मरने और मर-मरकर जीने की तमन्ना रखता है वही इस प्रेम-सूरा का पान कर सकता है। मरजीवा बनकर ही इस प्रेम को प्राप्त किया जा सकता है। ’मरजीवा‘ अर्थात समुद्री गोताखोर जो गहरे समुद्र में धंसकर मोतियों को निकालता है।

’जरि-जरि मरै सो मरि-मरि जिए। सो पै पेम सूरा-रस पीए।‘

’जाना जेहिक प्रेम मंह हिया। मरै न कबहूं सो मरजिया।‘

सूफी प्रेम-काव्य में शरीर और आत्मा के चीख-पुकार और तड़पन की कहानी है। आचार्य चन्द्रबली पाण्डेय कहते हैं "कि साधना के दौरान नफ़्स के मारने से शरीर तड़पता है और समां में रूह (आत्मा) परमात्मा से मिलने के लिए तड़पती है।"(10) सूफी जानते हैं कि यह प्रेम कठिन दुहेला है परन्तु जो इस प्रेम के खेल को खेलता है वह दोनों जग से तर जाता है। इस प्रेम का माधुर्य ऐसा है कि कड़वा भी मीठा लगने लगता है; और प्रेमी शूल को भी फूल समझ लेता है; इस प्रेम में जान देना तो सौभाग्य की बात है, वह सूली को देखकर ऐसे हंसता है जैसे कभी मंसूर ने हंस दिया था। यह विरह तो अमृत के समान है जैसे मोम के घर में शहद का बास होता है वैसे प्रेम के घर में विरह का। सूफी-

साधना और सूफी-काव्य में विरह का साम्राज्य पसरा हुआ है। विरह- वर्णन सूफी-काव्य की मूल आत्मा है। सूफी कवियों ने जगत-व्यापार के माध्यम से परमात्म-विरह को ही अभिव्यक्ति दी है। दर्शन के स्तर पर सूफियों का विरह तो नित्य है। सूफियों का एकात्मवाद इस्लामी एकेश्वरवाद से भिन्न है। कुरान सिर्फ 'एक' अल्लाह की बात करता है, इसपर रामचन्द्र शुक्ल कहते हैं "एकेश्वरवाद स्थूल देववाद है और अद्वैतवाद सूक्ष्म आत्मवाद या ब्रहमवाद। बहुत से देवी-देवताओं को मानना आऔर सबके दादा एक बड़े देवता (ईश्वर) को मानना एक ही बात है। भावना में कोई अंतर नहीं है।' इस एकतत्ववादी या अद्वैतवादी प्रेम-साधना में साधक सारे संसार की वस्तुओं में परमात्मा की 'ज्योति' और उसके विरह का प्रसार देखते हैं। सूफी कहते हैं कि संसार की सारी वस्तुएँ उसी परमात्मा के प्रकाश से दीप्तिमान है। विरहाग्नि का प्रसार व्यापक है। विरहाग्नि के कारण ही सूर्य जल रहा है; रात और दिन उसी के ताप से जल रहे हैं। यह विरह की आग कभी स्वर्ग तो कभी पाताल जा रही है। विरह की यह अपार आग स्थिर नहीं है।"

सूफियों के दर्शन को आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने विशिष्टाद्वैती कहा है। विशिष्टाद्वैत का अर्थ है कि अद्वैत तो है, मगर विशिष्ट प्रकार का है। शंकर के दर्शन में जीव और जगत को व्यवहारिक सत्य माना गया, पारमार्थिक नहीं। जगत ब्रहम का विर्वत है यह तो माया है जिसके कारण जगत सत्य प्रतीत होता है अर्थात शंकर के अद्वैत में जगत के मिथ्यात्व को प्रतिपादित किया गया। विशिष्टाद्वैती जगत को उतना ही सत्य मानते है जितना ब्रहम सत्य है अंतर सिर्फ परिमाण का है। जिस प्रकार गर्म लोहे से स्फुलिंग निकलता तो उसमें लोहे के सभी गुण विद्यमान होते है, उसी प्रकार जीव-जगत का ब्रहम से सम्बंध है। गुण के आधार पर ब्रहम और जीव-जगत में कोई अंतर नहीं है, जीव-जगत तो ब्रहम का ही एक अंश है इस प्रकार विशिष्टाद्वैतवाद अंशा-अंशी सम्बंध का प्रतिपादन करता है। वायज़ीद विस्तामी कहते हैं कि 'मैं ही शराबी हूँ, मैं ही शराब और मैं ही साकी हूँ।' भावा- विष्टा दशा में प्रेमी साधक खुद में और परमात्मा में कोई अंतर नहीं पाते हैं। प्रेम में प्रेमी और प्रियतमा के अस्तित्व का विलयन होकर गुण के स्तर पर एक हो जाता है। इसी बात की अभिव्यक्ति बायजीद बिस्तामी इस प्रकार करते हैं कि 'कुछ नहीं है मेरे चोरो के नीचे ईश्वर के अतिरिक्त।' जीव-जगत और ईश्वर की एकता की घोषणा मंसूर हल्लाज ने अनलहक़ {मैं ही हक (सत्य)/ब्रहम हूँ} के रूप में की और उसे सूली पर चढ़ा दिया गया। यह तो सूफी-दर्शन के एकतत्ववाद की ताकत थी कि कट्टरपंथी उलेमा और शासकों ने बुतपरस्ती (मूर्ति पूजा) को गैर-इस्लामिक करार दिया, सूफियों ने उस बुत को ही खुदा बना दिया। जिस शराब को इस्लाम ने हराम करार दिया सूफियों ने अमरदपरस्ती को साधना और काव्य का रस बना दिया। जिस संगीत और शायरी को इस्लाम ने कुफ्र करार दिया सूफियों की समां संगीत से सज गयी और शायरी प्रेम-सूरा का पान करने लगी।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि सूफियों का प्रेम साधनात्मक-प्रेम है और प्रेमी-साधक को इस प्रेम-साधना के लिए गुरु की आवश्यकता पड़ती है। सूफियों ने परमात्मा की कल्पना स्त्री-रूप में की और स्त्री-सौंदर्य को परमात्मा के

सौंदर्य के रूप में देखा। सूफी अल्लाह के ज़लाल (ऐश्वर्य) नहीं, अल्लाह के ज़माल (सौंदर्य) के कायल हैं। सूफियाें की साधना में प्रकाश का बहुत महत्व है। सूफी सारी सृष्टि को परमात्मा के प्रकाश से दीप्तिमान समझते हैं। सूफियों की प्रेम- साधना एकांतिक और रहस्यात्मक है। सूफी-साधना और काव्य की केन्द्रीय वस्तु 'प्रेम' है। सूफी मानते हैं की जीव का जन्म लेना ही 'शाश्वत विरह' का कारण है इसलिए सूफियों के काव्य में विप्रलंग शृंगार के अंतर्गत 'विरह' का प्राधान्य है। दर्शन के स्तर पर सूफी विशिष्टाद्वैती हैं। सूफी प्रेम-काव्य इस बात की वकालत करता है कि प्रेम की प्राप्ति बल से या अहंकार से नहीं हो सकती; यह परस्पर अनुरक्ति, मनुहार और धैर्य से ही संभव है। भारतीय सूफी-काव्य का संयोग-शृंगार वर्णन और लोकपक्ष और प्रकृति चित्रण दुनियाँ के सूफी-काव्य में विशिष्ट स्थान दिलाता है।

संदर्भ ग्रंथ :-

- मधुमालती- माताप्रसाद गुप्त, मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, राज संस्करण,पृ० 20
- जायसी ग्रंथावली-आचार्य रामचंद्र शुक्ल ,लोकभारती प्रकाशन,पृ० 51
- जायसी ग्रंथावली-आचार्य रामचंद्र शुक्ल ,लोकभारती प्रकाशन,पृ० 52
- जायसी ग्रंथावली-आचार्य रामचंद्र शुक्ल ,लोकभारती प्रकाशन,पृ० 64
- तसव्वुफ अथवा सूफीमत -चंद्रबली पांडेय,सरस्वती मंदिर प्रकाशन,पृ० 78
- तसव्वुफ अथवा सूफीमत -चंद्रबली पांडेय,सरस्वती मंदिर प्रकाशन, पृ : 185
- 7.जायसी ग्रंथावली- आचार्य रामचंद्र शुक्ल ,लोकभारती प्रकाशन,पृ०157
- मध्यकालीन प्रेम-साधना -परशुराम चतुर्वेदी, साहित्य भवन, इलाहाबाद,पृ० 97.
- 9.. सूफी काव्य अनुशीलन - प्रो० श्याम मनोहर पाण्डेय पृ० 194
- 10.सूफ़ी काव्य अनुशीलन - प्रो० श्याम मनोहर पाण्डेय पृ० 267